

Lord's chariot picture, see front and back cover design

$6+44+6=56$ but 64 is ok pages, 5.2 x 3.7

add 8 more pages

श्री गीताचालीसा

*This Gita Chalisa is distributed
with complements of:*

अन्तर्राष्ट्रीय गीता सोसायटी के लक्ष्य और उद्देश्य

१. भगवद्गीता का अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में प्रकाशन, और नाममात्र सहयोग राशि-मूल्य पर वितरण करना.
२. श्रीमद्भगवद्गीता की मूल असाम्प्रदायिक सार्वभौमिक शिक्षा का सहज-सरल भाषा में अनुवाद द्वारा प्रचार-प्रसार.
३. गीता अध्ययन और सत्संग सभाओं की स्थापना में सहयोग और मार्गदर्शन देना तथा युवा, छात्र-वर्ग, और व्यस्त व्यावसायिक प्रशासकों एवं अन्य रुचि रखने वालों में गीता का पत्राचार द्वारा निःशुल्क प्रशिक्षण.
४. वैदिक ज्ञान के अध्ययन और प्रसार में जुटे अन्य व्यक्तियों तथा लाभ-निरपेक्ष संस्थाओं को प्रेरणा, सहयोग और सहायता का आदान प्रदान तथा आध्यात्मिक, तत्त्वज्ञान, ध्यानयोग आदि पर व्याख्यानों, परिसंवादों, और संक्षिप्त पाठ्यक्रमों की व्यवस्था करना.
५. वेदों, उपनिषदों, गीता, रामायण, तथा विश्व के अन्य प्रमुख धर्मग्रन्थों की शाश्वत असाम्प्रदायिक शिक्षा के माध्यम से विभिन्न धर्मों के बीच की खाई को पाटना तथा सब वर्णों, जातियों, धर्मों, और वर्गों में एकता तथा विश्व बंधुत्व की भावना का प्रसार करना.

श्रीमद् भगवद्गीता अंग्रेजी, हिन्दी, गुजराती तथा अन्य भाषाओं में हमारे
Website: www.gita-society.com पर निःशुल्क उपलब्ध है.
पुस्तक के रूप में हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषा में गीता प्राप्त करने का पता –
Motilal Banarsidass Booksellers at: Delhi, Mumbai, Bangalore,
Chennai, Pune, Kolkata, Patna and Varanasi
and
All Barnes & Noble Bookstores, and amazon.com in U.S.A or
from our website: www.gita-society.com

ॐ

श्री गीताचालीसा

FORTY GITA VERSES

(For Daily Reading and Contemplation)

ॐ श्री गणेशाय नमः ॐ

वसुदेवसुतं देवं, कंसचाणूरमर्दनम् ।

देवकीपरमानन्दं, कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ॥१॥

मूकं करोति वाचालं, पङ्गुं लङ्घयते गिरिम् ।

यत्कृपा तमहं वन्दे, परमानन्दमाधवम् ॥२॥

Aum śrī Ganeśāya namaḥ

vasudeva sutarṁ devaṁ, kaṁsa cāṇūra mardanam
devakī paramānandaṁ, kṛṣṇaṁ vande jagadgurum
mūkaṁ karoti vācāraṁ, paṅguṁ laṅghayate girim
yatkrpā tamahaṁ vande, paramānanda mādhavam

(Visit www.gita-society.com/hindifile/hguide2.pdf
for help on pronunciation of Romanized Sanskrit verses)

Obeisance To The Supreme Lord

I offer my obeisance to Lord Kṛṣṇa, the world Teacher,
who is the son of Vasudeva, the remover of all obstacles,
the supreme bliss of His mother Devakī, and whose
grace makes the dumb eloquent and the
cripple cross the mountains.

धृतराष्ट्र उवाच—

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे - समवेता युयुत्सवः ।

मामकाः पाण्डवाश्चैव - किम् अकुर्वत संजय ॥१.०१॥

dhṛtarāṣṭra uvāca—

dharma-kṣetre kuru-kṣetre - sama-vetā yu-yu-tsa-vaḥ

māma-kāḥ pāṇḍa-vāś cai 'va - kim akur-vata Saṁjaya

धृतराष्ट्र बोले — हे संजय, धर्मभूमि कुरुक्षेत्र में एकत्र हुए युद्ध के इच्छुक मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने क्या-क्या किया? (१.०१)

Dhṛtarāṣṭra said: O Sanjaya, assembled in the holy field of Kurukṣetra and eager to fight, what did my people and the Pāṇḍavas do? (1.01)

संजय उवाच—

तं तथा कृपयाविष्टम् - अश्रुपूर्णकुलेक्षणम् ।

विषीदन्तम् इदं वाक्यम् - उवाच मधुसूदनः ॥२.०१॥

sañjaya uvāca—

tañ tathā kṛpayā·viṣṭam - aśru·pūrṇā·kulekṣa·ṇam

viṣīdantam idaṃ vākyaṃ - uvāca madhu·sūdanaḥ

संजय बोले— इस तरह करुणा से व्याप्त, आंसू भरे, व्याकुल नेत्रों वाले, शोकयुक्त अर्जुन से भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा— (२.०१)

Sanjaya said: Lord Kṛṣṇa spoke these words to Arjuna whose eyes were tearful and downcast, and who was overwhelmed with compassion and despair. (2.01)

श्रीभगवानुवाच—

अशोच्यान् अन्वशोचस् त्वं - प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।
गतासून् अगतासूंश्च - नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥२.११॥

śrī·bhagavān·uvāca—

aśocyān anva·śocas tvaṁ - prajñā·vādā·mśca bhāṣase
gatāsūn agatā·sūmśca - nānu·śocanti paṇḍitāḥ

श्रीभगवान् बोले— हे अर्जुन, तू ज्ञानियों की तरह बातें करते हो, लेकिन जिनके लिए शोक नहीं करना चाहिए, उनके लिए शोक करते हो. ज्ञानी मृत या जीवित किसी के लिए भी शोक नहीं करते. (२.११)

The Supreme Lord said: You grieve for those who are not worthy of grief, and yet speak the words of wisdom. The wise grieve neither for the living nor for the dead. (2.11)

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे - कौमारं यौवनं जरा ।
तथा देहान्तरप्राप्तिर् - धीरस् तत्र न मुह्यति ॥२.१३॥

dehino'smin yathā dehe - kaumā-ram yauva-naṁ jarā
tathā dehā-ntara-prāptir - dhīras tatra na muhyati

जैसे इसी जीवन में जीवात्मा बाल, युवा, और वृद्ध शरीर प्राप्त करता है, वैसे ही जीवात्मा मृत्यु के बाद दूसरा शरीर प्राप्त करता है. इसलिए धीर पुरुष को मृत्यु से घबराना नहीं चाहिए. (२.१३)

Just as Ātmā acquires a childhood body, a youth body, and an old age body during this life, similarly Ātmā acquires another body after death. The wise are not deluded by this. (2.13)

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय - नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्य्-अन्यानि संयाति नवानि देही ॥

vāsānsi jīrṇāni yathā vihāya - navāni grhṇāti naro'parāṇi
tathā śarīrāṇi vihāya Jīrṇāny - anyāni saṁyāti navāni dehī

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को उतार कर दूसरे नये वस्त्र धारण करता है, वैसे ही जीवात्मा मृत्यु के बाद पुराने शरीर को त्याग कर नया शरीर प्राप्त करता है.
(२.२२)

Just as a person puts on new garments after discarding the old ones, similarly Atmā acquires new bodies after casting away the old bodies. (2.22)

सुखदुःखे समे कृत्वा - लाभालाभौ जयाजयौ ।
ततो युद्धाय युज्यस्व - नैवं पापम् अवाप्स्यसि ॥२.३८॥

sukha-duḥkhe same kṛtvā - lābhā-lābhau jayā-jayau
tato yud-dhāya yujya-sva - naivaṁ pāpam avāp-syasi

सुख-दुःख, लाभ-हानी, और जीत-हार की चिन्ता न करके मनुष्य को अपनी शक्ति के अनुसार कर्तव्य कर्म करना चाहिए. ऐसे भाव से कर्म करने पर मनुष्य को पाप (या कर्म का बन्धन) नहीं लगता. (२.३८)

Treating pleasure and pain, gain and loss, and victory and defeat alike, engage yourself in your duty. By doing your duty this way you will not incur sin. (2.38)

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

9

कर्मण्येवाधिकारस्ते - मा फलेषु कदाचन ।

मा कर्मफलहेतुर् भूर् - मा ते सङ्गोऽस्त्व अकर्मणि ॥२.४७॥

kar-manye-eva-dhika-raste - ma phalesu kada-cana

ma karma-phala-hetur bhūr - ma te saṅgo'stv akar-maṇi

केवल कर्म करना ही मनुष्य के वश में है, कर्मफल नहीं. इसलिए तुम कर्मफल की आसक्ति में न फंसो, तथा अपने कर्म का त्याग भी न करो. (२.४७)

You have control over your respective duty only, but no control or claim over the results. The fruits of work should not be your motive. You should never be inactive. (2.47)

बुद्धियुक्तो जहातीह - उभे सुकृतदुष्कृते ।
तस्माद् योगाय युज्यस्व - योगः कर्मसु कौशलम् ॥२.५०॥

buddhi-yukto jahā-tīha - ubhe sukr̥ta-duṣkr̥te
tasmād yogāya yujya-sva - yogaḥ karma-su kauśalam

कर्मफल की आसक्ति त्याग कर काम करने वाला निष्काम कर्मयोगी इसी जीवन में पाप और पुण्य से मुक्त हो जाता है, इसलिए तू निष्काम कर्मयोगी बन. निष्काम कर्मयोग को ही कुशलता पूर्वक कर्म करना कहते हैं. (२.५०)

A Niṣkāma Karma-yogī becomes free from both vice and virtue in this life itself. Therefore, strive for Niṣkāma Karma-yoga. Working to the best of one's abilities without becoming attached to the fruits of work is called Niṣkāma Karma-yoga. (2.50)

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

11

इन्द्रियाणां हि चरतां - यन् मनोऽनुविधीयते ।

तदस्य हरति प्रज्ञां - वायुर् नावम् इवाम्भसि ॥२.६७॥

indriyā-ṅāṁ hi cara-tām - yan mano'nuvi-dhī-yate

tad-asya harati pra-jñām - vāyur nāvam ivām-bhasi

जैसे जल में तैरती नाव को तूफान उसे अपने लक्ष्य से दूर ढकेल देता है, वैसे ही इन्द्रिय सुख मनुष्य की बुद्धि को गलत रास्ते की ओर ले जाता है. (२.६७)

The mind, when controlled by the roving senses, steals away the intellect as a storm takes away a boat on the sea from its destination, the spiritual shore. (2.67)

प्रकृतेः क्रियमाणानि - गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहंकारविमूढात्मा - कर्ताहम् इति मन्यते ॥३.२७॥

pra.kṛteḥ kriya.māṇāni - guṇaiḥ kar.māṇi sarva.śaḥ
aham.kāra vimū.ḍhātmā - kartā.ham iti man.yate

वास्तव में संसार के सारे कार्य प्रकृति मां के गुणरूपी परमेश्वर की शक्ति के द्वारा किए जाते हैं, परन्तु अज्ञानवश मनुष्य अपने आपको कर्ता समझ लेता है, (तथा कर्मफल के बंधनों से बंध जाता है. मनुष्य तो परम शक्ति के हाथ की केवल एक कठपुतली मात्र है.) (३.२७)

All works are being done by the Guṇas (or the energy and power) of nature, but due to delusion of ego people assume themselves to be the doer, and incur Kārmic bondage. (3.27)

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा - संस्तभ्यात्मानम् आत्मना ।
जहि शत्रुं महाबाहो - कामरूपं दुरासदम् ॥३.४३॥

evaṁ buddheḥ paraṁ buddhvā-saṁsta-bhya' tmā-nam ātmanā
jahi śatruṁ mahā-bāho - kāma-rupam durā-sadam

आत्मा को मन और बुद्धि से श्रेष्ठ जानकर, (सेवा, ध्यान, पूजन, आदि से किए हुए शुद्ध) बुद्धि द्वारा मन को वश में करके, हे महाबाहो, तुम इस दुर्जय कामरूपी शत्रु का विनाश करो. (३.४३)

Knowing the Ātmā to be superior to the intellect, and controlling the mind by the intellect (that is purified by Jñāna), one must kill this mighty enemy, Kāma or the lust, O Arjuna. (3.43)

यदा यदा हि धर्मस्य - ग्लानिर् भवति भारत ।
अभ्युत्थानम् अधर्मस्य - तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥४.०७॥

yadā yadā hi dharma-sya - glānir bhavati bhārata
abhyu-tthā-nam adharma-sya - tadā'tmānam sṛjāmy-aham

हे अर्जुन, जब-जब संसार में धर्मकी हानी और अधर्म की वृद्धि होती है, तब मैं, परब्रह्म परमात्मा, प्रकट होता हूँ. (४.०७)

Whenever there is a decline of Dharma and the rise of Adharma, O Arjuna, then I appear (or manifest Myself). (4.07)

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं - गुणकर्मविभागश्च ।

तस्य कर्तारम् अपि मां - विद्ध्य अकर्तारम् अव्ययम् ॥४.१३॥

cātur-varṇyaṁ mayā sṛṣṭam - guṇa-karma-vibhā-gaśaḥ
tasya kartā-ram api mām - viddhy akartā-ram avyayam

मेरे द्वारा ही चारो वर्ण अपने-अपने गुण, स्वभाव, और रुचि अनुसार बनाए गए हैं. सृष्टि के रचना आदि कर्म के कर्ता होनेपर भी मुझ परमेश्वर को अविनाशी तथा अकर्ता ही जानना चाहिए. (क्योंकि प्रकृति के गुण ही संसार चला रहे हैं.) (४.१३)

The four divisions (or Varṇa) — based on aptitude and vocation — of human society were created by Me. Though I am the author of this system, one should know that I do nothing and I am eternal. (Nature does all works.) (4.13)

कर्मण्य् अकर्म यः पश्येद् - अकर्मणि च कर्म यः ।
स बुद्धिमान् मनुष्येषु - स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥४.१८॥

kar·maṅy akarma yaḥ paśyed - akar·maṅi ca karma yaḥ
sa buddhi·mān manu·ṣyeṣu - sa yuktaḥ kṛt·sna·karma·kṛt

जो मनुष्य कर्म में अकर्म तथा अकर्म में कर्म देखता है वही ज्ञानी, योगी, तथा समस्त कर्मों का करने वाला है. (अपने को कर्ता नहीं मान कर प्रकृति के गुणों को ही कर्ता मानना कर्म में अकर्म तथा अकर्म में कर्म देखना कहलाता है.)
(४.१८)

**The one who sees inaction in action, and action in inaction,
is a wise person. Such a person is a yogī and has
accomplished everything. (4.18)**

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

17

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर् - ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं - ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥४.२४॥

brahmā' rpaṇam brahma havir - brahmā·gnau brahma·ṇā hutam
brah·maiva tena ganta·vyam - brahma·karma·samā·dhiṇā

यज्ञ का अर्पण, घी, अग्नि, तथा आहुति देनेवाला सभी परब्रह्म परमात्मा ही है.
इस तरह जो सब कुछ परमात्मा स्वरूप देखता है, वह परमात्मा को प्राप्त होता
है. (४.२४)

Brahma is the oblation. Brahma is the clarified butter. The oblation is poured by Brahma into the fire that is also Brahma. Brahma shall be realized by the one who considers everything as (a manifestation or) an act of Brahma. (4.24)

न हि ज्ञानेन सदृशं - पवित्रम् इह विद्यते ।
तत् स्वयं योगसंसिद्धः - कालेनात्मनि विन्दति ॥४.३८॥

na hi jñā-nena sa-dṛśam - pavi-tram iha vidyate
tat svayaṁ yoga-saṁ-siddhaḥ - kālenā'tmani vindati

इस संसार में तत्त्वज्ञान के समान (अन्तःकरण को) शुद्धा करनेवाला निस्संदेह कुछ भी नहीं है. उस तत्त्वज्ञान को, ठीक समय आने पर, कर्मयोगी अपने-आप प्राप्त कर लेता है. (४.३१, ५.०६ भी देखें.) (४.३८)

Verily, there is no purifier in this world like Brahma-Jñāna, the true knowledge of Brahma. One who becomes purified by Karma-yoga discovers this knowledge within, naturally, in due course of time. (4.38)

संन्यासस् तु महाबाहो - दुःखम् आप्तुम् अयोगतः ।
योगयुक्तो मुनिर् ब्रह्म - नचिरेणाधिगच्छति ॥५.०६॥

saṁ-nyā-sas tu mahā-bāho - duḥ-kham āptum ayoga-taḥ
yoga-yukto munir brahma - naci-reṇā'dhi-gacchati

हे अर्जुन, कर्मयोग की निःस्वार्थ सेवा के बिना शुद्ध संन्यास-भाव, अर्थात् सम्पूर्ण कर्मों में कर्तापन का त्याग, प्राप्त होना कठिन है. निष्काम कर्मयोगी शीघ्र ही परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त करता है. (५.०६)

But Saṁnyāsa, O Arjuna, is difficult to attain without Karma-yoga. A sage equipped with Karma-yoga quickly attains Brahma. (5.06)

ब्रह्मण्य् आधाय कर्माणि - सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन - पद्मपत्रम् इवाम्भसा ॥५.१०॥

brah·maṇy ādhāya karmāṇi - saṅgam tyaktvā karoti yaḥ
lipyate na sa pāpena - padma·patram ivām·bhasā

जो मनुष्य कर्मफल में लोभ और आसक्ति त्यागकर, सभी कर्मों को परमात्मा में अर्पण करता है, वह कमल के पत्ते की तरह पापरूपी जल से कभी लिप्त नहीं होता. (५.१०)

One who does all work as an offering to the Lord — abandoning attachment to the results — is as untouched by sin (or Karmic reaction) as a lotus leaf is untouched by water. (5.10)

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

21

यो मां पश्यति सर्वत्र - सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि - स च मे न प्रणश्यति ॥६.३०॥

yo mām paśyati sarvatra - sarvaṁ ca mayi paśyati
tsyā'haṁ na praṇaśyāmi - sa ca me na praṇaśyati

जो मनुष्य सब जगह तथा सब में मुझ परब्रह्म परमात्मा को ही देखता है, और सबको मुझ में ही देखता है, मैं उससे अलग नहीं रहता तथा वह भी मुझ से दूर नहीं होता. (६.३०)

**Those who see Me in everything and see everything in Me,
are not separated from Me and I am not separated from
them. (6.30)**

चतुर्विधा भजन्ते मां - जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।
आर्तो जिज्ञासुर् अर्थार्थी - ज्ञानी च भरतर्षभ ॥७.१६॥

catur-vidhā bha-jante mām - janāḥ sukṛ-tino'rjuna
ārto jijñā-sur arthā-rthī - jñānī ca bhara-tar-ṣabha

हे अर्जुन, चार प्रकार के उत्तम पुरुष — दुःख से पीड़ित, परमात्मा को जानने की इच्छा वाले जिज्ञासु, धन या किसी इष्टफल की इच्छा वाले, तथा ज्ञानी — मुझे भजते हैं. (७.१६)

**Four types of virtuous ones worship or seek Me, O Arjuna.
They are: The distressed, the seeker of Self-knowledge, the
seeker of wealth, and the wise one who knows the Supreme.
(7.16)**

बहूनां जन्मनाम् अन्ते - ज्ञानवान् मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वम् इति - स महात्मा सुदुर्लभः ॥७.१९॥

bahū-nām janma-nām ante - jñāna-vān mām prapa-dyate
vāsu-devaḥ sarvam iti - sa mahātmā su-durla-bhaḥ

अनेक जन्मों के बाद ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर कि "यह सब कुछ कृष्णमय है," मनुष्य मुझे प्राप्त करते हैं; ऐसे महात्मा बहुत दुर्लभ हैं. (७.१९)

After many births the wise ones resort (or surrender) to Me by realizing that everything is, indeed, My (or Para-Brahma's) manifestation. Such a great soul is very rare. (7.19)

अव्यक्तं व्यक्तिम् आपन्नं - मन्यन्ते माम् अबुद्धयः ।
परं भावम् अजानन्तो - ममाव्ययम् अनुत्तमम् ॥७.२४॥

avya·ktaṁ vya·kṭim āpan·naṁ - many·ante mām abu·ddha·yaḥ
paraṁ bhāvam ajā·nanto - mamā'vya·yam anu·tta·mam

अज्ञानी मनुष्य मुझ परब्रह्म परमात्मा के — मन, बुद्धि, तथा वाणी से परे, परम अविनाशी — दिव्यरूप को नहीं जानने और समझने के कारण ऐसा मान लेते हैं कि मैं बिना रूप वाला निराकार हूँ, तथा रूप धारण करता हूँ. (७.२४)

The ignorant ones — unable to understand My immutable, incomparable, incomprehensible, and transcendental form (or existence) — assume that I, the Supreme Being (Para-Brahma), am formless and take forms or incarnate. (7.24)

यं यं वापि स्मरन् भावं - त्यजत्य् अन्ते कलेवरम् ।
तं तं एवैति कौन्तेय - सदा तद्भावभावितः ॥८.०६॥

yaṁ yaṁ vā'pi smaran bhā-vaṁ - tya-jaty ante kale-varam
taṁ taṁ evaiti kaun-teya - sadā tad-bhāva-bhā-vitaḥ

हे अर्जुन, मनुष्य मरने के समय जिस किसी भी भाव को स्मरण करता हुआ शरीर त्यागता है, वह सदा उस भाव के चिन्तन करने के कारण उसी भाव को प्राप्त होता है. (८.०६)

Remembering whatever object one leaves the body at the end of life, one attains that object, O Arjuna, because of the constant thought of that object (one remembers that object at the end of life and achieves it). (8.06)

तस्मात् सर्वेषु कालेषु - माम् अनुस्मर युध्य च ।
मय्य् अर्पितमनोबुद्धिर् - माम् एवैष्यस्य् असंशयम् ॥८.०७॥

tasmāt sarve-ṣu kāleṣu - mām anu-smara yudhya ca
mayy arpita-mano-buddhir - mām evai'syasy asaṁ-śayam

इसलिए हे अर्जुन, तू सदा मेरा स्मरण कर, और अपना कर्तव्य कर. इस तरह मुझ में अर्पण किए मन और बुद्धि से युक्त होकर निःसन्देह तुम मुझको ही प्राप्त होगा. (८.०७)

Therefore, always remember Me and do your duty. You shall certainly attain Me if your mind and intellect are fixed on Me. (8.07)

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

27

अनन्याश् चिन्तयन्तो - मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां - योगक्षेमं वहाम्य् अहम् ॥९.२२॥

anan-yāś cinta-yanto mām - ye janāḥ paryu-pāsate
teṣām nityā-bhiyu-ktā-nām - yoga-kṣe-maṁ vahāmy-aham

जो भक्तजन अनन्य भावसे चिन्तन करते हुए मेरी उपासना करते हैं, उन नित्ययुक्त भक्तों का योगक्षेम मैं स्वयं वहन करता हूँ. (९.२२)

I personally take care of both material and spiritual welfare of those ever steadfast devotees who always remember or worship Me with single minded contemplation. (9.22)

पत्रं पुष्पं फलं तोयं - यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।
तद् अहं भक्त्युपहतम् - अश्नामि प्रयतात्मनः ॥९.२६॥

patraṁ puṣpaṁ phalaṁ toyam - yo me bhaktyā praya-cchati
tad ahaṁ bha-kty-upa-hṛtam - aśnāmi praya-tāt-manaḥ

जो मनुष्य प्रेमभक्ति से पत्र, फूल, फल, जल, आदि कोई भी वस्तु मुझे अर्पण करता है, तो मैं उस शुद्धचित्त वाले भक्त का वह प्रेमोपहार केवल स्वीकार ही नहीं करता, बल्कि उसका भोग भी करता हूँ. (९.२६)

Whosoever offers Me a leaf, a flower, a fruit, or water with love; I accept and eat the offering of devotion by the pure hearted. (9.26)

मन्मना भव मद्भक्तो - मद्याजी मां नमस्कुरु ।

माम् एवैष्यसि युक्तवैवम् - आत्मानं मत्परायणः ॥९.३४॥

man-manā bhava mad-bhakto - madyājī māṁ nama-skuru
mām evai'syasi yuk-tvai'vam - ātmā-naṁ mat-parā-yaṇaḥ

मुझ में मन लगा, मेरा भक्त बन, मेरी पूजा कर, मुझे प्रणाम कर. इस प्रकार मेरा परायण होने से तू मुझे ही प्राप्त होगा. (९.३४)

Fix your mind on Me, be devoted to Me, worship Me, and bow down to Me. Thus uniting yourself with Me, and setting Me as the supreme goal and sole refuge, you shall certainly realize (or come to) Me. (9.34)

अहं सर्वस्य प्रभवो - मत्तः सर्वं प्रवर्तते ।
इति मत्वा भजन्ते मां - बुधा भावसमन्विताः ॥१०.०८॥

aham sarva-sya pra-bhavo - mattaḥ sarvaṁ pra-var-tate
iti matvā bhaja-nte mām - budhā bhāva-saman-vitāḥ

मैं ही सबके उत्पत्ति का कारण हूँ, और मुझ से ही जगत् का विकास होता है.
ऐसा जानकर बुद्धिमान् भक्तजन श्रद्धापूर्वक मुझ परमेश्वर को ही निरन्तर
भजते हैं. (१०.०८)

**I am the origin of all. Everything emanates from Me.
Understanding this, the wise ones worship Me with love and
devotion. (10.08)**

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

31

मत्कर्मकृन् मत्परमो - मद्भक्तः सङ्गवर्जितः ।

निर्वैरः सर्वभूतेषु - यः स माम् एति पाण्डव ॥११.५५॥

mat·karma·kṛn mat·paramo - mad·bhak·taḥ saṅga·var·jitaḥ
nir·vairaḥ sarva·bhūte·ṣu - yaḥ sa mām·eti pāṇḍava

हे अर्जुन, जो पुरुष मेरे लिए ही कर्म करता है, मुझ पर ही भरोसा रखता है, मेरा भक्त है, तथा जो आसक्ति रहित और निर्वैर है, वही मुझे प्राप्त करता है.
(११.५५)

The one who does all works for Me, and who depends on Me, who is my devotee, who has no attachment, and is free from enmity towards any being attains Me, O Arjuna. (11.55)

मय्येव मन आधत्स्व - मयि बुद्धिं निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव - अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥१२.०८॥

may.yeva mana ādha.tsva - mayi buddhiṃ nive.śaya
niva.sis̥y.asi may.yeva - ata ūrdh.vaṃ na saṃ.śayaḥ

मुझ में ही अपना मन लगा, और बुद्धिसे मेरा ही चिन्तन कर, इसके उपरान्त
निःसंदेह तुम मुझ में ही निवास करोगे. (१२.०८)

**Fix your mind on Me, and let your intellect dwell upon Me
alone (through meditation and contemplation). Thereafter
you shall certainly attain Me. (12.08)**

समं सर्वेषु भूतेषु - तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।
विनश्यत्स्व् अविनश्यन्तं - यः पश्यति स पश्यति ॥१३.२७॥

samaṁ sarveṣu bhū-teṣu - tiṣṭha-ntaṁ para-meśva-ram
vina-śya-tsv avina-śyan-taṁ - yaḥ paśyati sa paśyati

जो पुरुष अविनाशी परमेश्वर को ही समस्त नश्वर प्राणियों में समान भाव से स्थित देखता है, वही वास्तव में ईश्वर का दर्शन करता है. (१३.२७)

The one who sees the same immutable Supreme Lord (or Ātmā) dwelling equally within all perishable beings truly sees. (13.27)

मां च योऽव्यभिचारेण - भक्तियोगेन सेवते ।
स गुणान् समतीत्यैतान् - ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥१४.२६॥

mām ca yo 'vya.bhicā.reṇa - bhakti.yogena sevate
sa guṇān sama.tītyai'tān - brahma.bhū.yāya kalpate

जो पुरुष अनन्य भक्ति से मेरी उपासना करता है, वह प्रकृति के तीनों गुणों को पार करके परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति के योग्य हो जाता है. (१४.२६)

The one who offers service to Me with love and unswerving devotion transcends three Guṇas, and becomes fit for Brahma-nirvāṇa. (14.26)

सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो - मत्तः स्मृतिर् ज्ञानम् अपोहनं च ।
वेदैश्च सर्वैर् अहम् एव वेद्यो - वेदान्तकृद् वेदविद् एव चाहम् ॥

sarva-sya cā'ham ḥṛdi saṁ-nivi-ṣṭo-mattaḥ smṛtir jñānam apo-ha-naṁ ca
vedai-śca sar-vair aham-eva vedyo-vedānta-kṛd veda-vid eva cā'ham

मैं ही सभी प्राणियों के अन्तःकरण में स्थित हूँ. स्मृति, ज्ञान, तथा शंका समाधान (विवेक या समाधि द्वारा) भी मुझ से ही होता है. समस्त वेदों के द्वारा जानने योग्य वस्तु, वेदान्त का कर्ता, तथा वेदों का जानने वाला भी मैं ही हूँ. (१५.१५)

I am seated in the hearts of all beings. The memory, knowledge, and the removal of doubts and wrong notions about God come from Me. I am verily that which is to be known by the study of all the Vedas. I am, indeed, the author of the Vedanta and the student of the Vedas. (15.15)

त्रिविधं नरकस्येदं - द्वारं नाशनम् आत्मनः ।
कामः क्रोधस् तथा लोभस् - तस्माद् एतत् त्रयं त्यजेत् ॥

tri·vidham nara·kasye'dam - dvāram nāśa·nam ātma·naḥ
kāmaḥ krodhas tathā lobhas - tasmād etat trayam tyajet

काम, क्रोध, और लोभ मनुष्य को नरक की ओर ले जाने वाले तीन रास्ते हैं, इसलिए इन तीनों का त्याग करना चाहिए. (१६.२१)

Lust, anger, and greed are the three gates of hell leading to the downfall (or bondage) of Jīva. Therefore, one must (learn to) give up these three. (16.21)

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

37

अनुद्वेगकरं वाक्यं - सत्यं प्रियहितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव - वाङ्मयं तप उच्यते ॥१७.१५॥

anu-dvega-karam vākyaṁ - satyaṁ priya-hitam ca yat
svā-dhyā-yā 'bhya-sanam cai'va - vāñ-mayaṁ tapa ucyate

वाणी वही अच्छी है जो दूसरों के मन में अशान्ति पैदा न करे; जो सत्य, प्रिय, और हितकारक हो; तथा जिसका उपयोग शास्त्रों के पढ़ने में हो. (१७.१५)

Speech that is non-offensive, truthful, pleasant, beneficial, and is used for the regular study of scriptures is called the austerity of word. (17.15)

भक्त्या माम् अभिजानाति - यावान् यश् चास्मि तत्त्वतः ।
ततो माम् तत्त्वतो ज्ञात्वा - विशते तदनन्तरम् ॥१८.५५॥

bhaktyā mām abhi-jānāti - yāvān yaś cā'smi tattva-taḥ
tato mām tatt-vato jñātvā - viśate tada-nanta-ram

श्रद्धा और भक्ति (अर्थात् पराभक्ति) के द्वारा ही मैं तत्त्व से जाना जा सकता हूँ कि मैं कौन हूँ और क्या हूँ. मुझे तत्त्व से जानने के पश्चात् तत्काल ही मनुष्य मुझमें प्रवेश कर (मत्स्वरूप बन) जाता है. (१८.५५)

By devotion one truly understands what and who I am in essence. Having known Me in essence, one immediately merges into Me. (18.55)

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

39

ईश्वरः सर्वभूतानां - हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन् सर्वभूतानि - यन्त्रारूढानि मायया ॥१८.६१॥

īśvaraḥ sarva-bhūtā-nām - hr̥ddeśe' rjuna tiṣṭhati
bhrā-mayan sarva-bhūtāni - yantrā-rūḍhāni māyayā

हे अर्जुन, ईश्वर (अर्थात् श्रीकृष्ण ही) सभी प्राणियों के अन्तःकरण में स्थित होकर अपनी माया के द्वारा प्राणियों को यन्त्र पर आरूढ़ (कर्म की कठपुतली) की तरह घुमाते रहता है. (१८.६१)

The Supreme Lord (or Lord Kṛṣṇa as Īśvara) abides in the heart of all beings, O Arjuna, causing all beings to act (or work out their Karma) by His power of Māyā as if they are (puppets of Karma) mounted on a machine. (18.61)

सर्वधर्मान् परित्यज्य - मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो - मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥१८.६६॥

sarva.dharmān pari.tyajya - mām.ekaṁ śara.ṇaṁ vraja
ahaṁ tvā sarva.pāpe.bhyo - mokṣa.yi.ṣyāmi mā śucaḥ

सम्पूर्ण धर्मों का (अर्थात् पुण्य कार्यों का भी) परित्याग करके तुम एक मेरी ही शरण में आ जाओ. शोक मत करो, मैं तुम्हें समस्त पापों (अर्थात् कर्म के बंधनों) से मुक्त कर दूंगा. (१८.६६)

Setting aside all noble deeds, just surrender completely to My will (with firm faith and loving contemplation). I shall liberate you from all sins (or the bonds of Karma). Do not grieve. (18.66)

य इमं परमं गुह्यं - मद्भक्तेषु अभिधास्यति ।

भक्तिं मयि परां कृत्वा - माम् एवैष्यत्य् असंशयः ॥१८.६८॥

ya imam para-mam guh-yam - mad-bha-kte-sv abhi-dha-syati
bhak-tim mayi param krtva - mam evai'syaty asam-sayah

जो व्यक्ति (गीता के) इस परम गुह्य ज्ञान का मेरे भक्तजनों के बीच प्रचार-प्रसार करेगा, वह मेरी यह सर्वोत्तम पराभक्ति करके निस्सन्देह मुझे प्राप्त होगा. उससे बढ़कर मेरा प्रिय कार्य करनेवाला कोई मनुष्य नहीं होगा; और न मेरा उससे ज्यादा प्रिय इस पृथ्वी पर कोई दूसरा होगा. (१८.६८-६९)

The one who shall propagate (or help the propagation in any way) this Supreme Secret philosophy of the Bhagavad-Gītā amongst My devotees, shall be performing the highest devotional service to Me, he or she shall be very dear to Me, and shall certainly (attain Parama-Dhāma and) come to Me.

संजय उवाच— यत्र योगेश्वरः कृष्णो - यत्र पार्थो धनुर्धरः ।

तत्र श्रीर् विजयो भूतिर् - ध्रुवा नीतिर् मतिर् मम ॥

samjaya uvāca-- yatra yoge-śvaraḥ kṛṣṇo yatra - pārtho dha-nur-dha-rah

tatra śrīr vijayo bhūtir - dhruvā nītir matir mama

संजय बोले — जहां भी, जिस देश या घर में, (धर्म अर्थात् शास्त्रधारी) योगेश्वर श्रीकृष्ण तथा (धर्म रक्षा एवं कर्मरूपी) शस्त्रधारी अर्जुन दोनों होंगे; वहीं श्री, विजय, विभूति, और नीति आदि सदा विराजमान रहेंगी. ऐसा मेरा अटल विश्वास है. (१८.७८)

Sanjaya said: Wherever there will be both Kṛṣṇa, the Lord of yoga (in the form of the scriptures (Śāstra)), and Arjuna with the weapons (Śāstra) of duty and protection, there will be everlasting prosperity, victory, happiness, and morality. This is my conviction. (18.78)

ॐ श्री हनुमते नमः ॐ

43

हरिः ॐ तत्सत् , हरिः ॐ तत्सत् , हरिः ॐ तत्सत्
श्रीकृष्णार्पणं अस्तु शुभं भूयात्
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

Hariḥ AUM tatsat - Hariḥ AUM tatsat - Hariḥ AUM tatsat
Śrī Kṛṣṇārpaṇaṁ astu śubhaṁ bhūyāt
AUM Śāntiḥ - Śāntiḥ - Śāntiḥ

This is offered to Lord Śrī Kṛṣṇa. May He bless us all with
Goodness, Prosperity, and Peace

AIMS AND OBJECTIVES
of the
INTERNATIONAL GITA SOCIETY®

The **International Gita Society (IGS)** is a registered, non-profit, tax-exempt, spiritual institution in the State of California and the United States of America under Section 501(c) (3) of the Revenue Code. It was founded in 1984 to enlighten and serve the humanity through the medium of the **Bhagavad-Gita**. The **Aims and Objectives** of AGS include the following:

1. **To publish the Bhagavad-Gita in English and other languages and distribute it at a nominal subsidized cost**, and put the Gita in libraries, hospitals, hotels, motels, and other public places **throughout the world, starting from India and the USA,**

similar to what the International Bible Society has done for the Bible all over the world.

2. To Spread the basic Non-sectarian Universal Teachings of Shrimad Bhagavad-Gita and other Vedic scriptures in an **easy to understand language** by establishing branches of the Society in other countries to be named as: **International Gita Society (IGS)**.
3. To provide inspiration, help, and guidance in establishing **Gita Study and Discussion (Satsang) Groups**, and provide free **Gita correspondence course** to the youth, students, busy executives and other interested persons.
4. To provide **inspiration, cooperation, and support** to persons and non-profit organizations engaged in the study and propagation of the Vedic knowledge; and to arrange lectures,

seminars, and short courses on meditation, yoga, and metaphysical sciences.

5. To break the barriers between faiths, and **establish unity of races, religions, castes, and creeds** through the immortal **non-sectarian** teachings of the Vedas, Upanishads, Gita, Ramayana, as well as other major world scriptures and to promote the **Universal Brotherhood of Mankind**.

How To Start A Gita Study (Satsang) Group

1 Talk to few like minded people in your friend and neighborhood circle about the idea of starting a Gita Satsang. Arrange a meeting with the spiritually inclined people and decide on time, place, and how often the group should meet. Evenings and weekends are usually preferred time. The meeting place could be a

local school, temple/church, conference room of an office building, or a public library. **Home should be the last choice.** The frequency of the meeting could be once a month, twice a month, or every Sunday. The duration of Satsang should be between one and two hours. Try any other method that works in your area.

2. A meeting format in which all members of the group are encouraged to participate in the study and discussion has worked well in the USA. Take a chapter of the Gita and assign first five verses of the chapter to one person and the next five verses to another person. These two people should prepare their assignments and present the meanings and interpretation of the verses during the next Satsang. Each presentation should be followed by a lively question and answer as well as a group discussion. A moderator should lead and moderate the discussion that should be to the point. Everybody should give their interpretation of the first five verses and participate in the

International Gita Society

v

discussion before going to the second speaker. A group meditation should be included either in the beginning or towards the end of Satsang.

3. Assign next two sets of five verses to two different speakers for the next meeting thereby giving everybody a chance to study, learn and participate as well as feel a part of the group.

Readers interested in promoting the ideals of the society, or for free Gita Correspondence Course for Beginners and Busy People and free pocket size Gita in English or Hindi may contact:

INTERNATIONAL GITA SOCIETY

Phone: 510-791-6953, Email: gita@gita-society.com

आप हमें सहयोग दान के लिए संपर्क करें, यदि –

- हिंदी या अंग्रेजी के संस्करण के प्रकाशन में सहायता करना चाहते हैं.
- गीता को किसी प्रांतीय भाषा में अनुवाद करना चाहते हैं.
- अन्तर्राष्ट्रीय गीता सोसायटी की शाखा अपने क्षेत्र में स्थापित करना चाहते हैं.

हमारा पता—

In India, contact:

INTERNATIONAL GITA SOCIETY®

International Gita Society

vii

GLOBAL GITA DISTRIBUTION CENTRES

CANADA

Hindu Seva Sangh

2633 Drew Rd. Mississauga, Ont. L4T 1G1

Contact: Omesh Sharma 905-677-7080

Chandan Persaud 416-754-2382

Vishnu Mandir Phone: 905-886-1724

8640 Yonge Street

Richmond Hill, Ont. L4C 6Z4

Contact: omo@globalspectruminc.com

GUYANA

Saraswati Vidya Niketan

Cornelia Ida, W.C.D.

Contact: Swami Aksharananda ph. 626-4521

Email: Swami_aksharananda@hotmail.com

HONG KONG: hnl@bhalla.com

International Gita Society

ix

**International Gita Society
511 Lowell Place
Fremont, CA 94536-1805, USA**

Visit our site: www.gita-society.com/free_Gita.htm
and order free pocket size Gita or
download complete Bhagavad-Gita.
Download Gita Chalisa in English from:
www.gita-society.com/chalisa-eng.pdf

